National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2026; 1(64): 241-243
© 2026 NJHSR
www.sanskritarticle.com

प्रतिभा झा
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय

Correspondence:
प्रतिभा झा
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय

भक्ति काव्य और हिंदी आलोचना : परंपरा, प्रवृत्तियाँ और आधुनिक पुनर्पाठ

प्रतिभा झा

सार

भारतीय साहित्यिक परंपरा में भक्ति काव्य मध्यकालीन सांस्कृतिक चेतना का सबसे व्यापक और प्रभावशाली साहित्यिक आंदोलन है। यह केवल आध्यात्मिक अनुभूति की अभिव्यक्ति नहीं बल्कि सामाजिक परिवर्तन, भाषिक लोकतंत्रीकरण और सांस्कृतिक पुनर्संरचना की ऐतिहासिक प्रक्रिया का प्रतिनिधि साहित्य है। भक्ति आंदोलन ने धर्म को संस्थागत नियंत्रण से मुक्त कर व्यक्तिगत अनुभव और मानवीय संवेदना के स्तर पर स्थापित किया। लोकभाषाओं में रचित भक्ति काव्य ने साहित्य को जनसाधारण तक पहुँचाकर भारतीय समाज में सांस्कृतिक समानता की भावना को विकसित किया।

हिंदी आलोचना ने भक्ति काव्य का मूल्यांकन विभिन्न ऐतिहासिक चरणों में बदलती आलोचनात्मक दृष्टियों के माध्यम से किया है। प्रारंभिक धार्मिक मूल्यांकन से लेकर आधुनिक समाजशास्त्रीय, सांस्कृतिक तथा विमर्शपरक पुनर्पाठ तक भक्ति साहित्य निरंतर नए अर्थ ग्रहण करता रहा है। प्रस्तुत शोध आलेख भक्ति काव्य और हिंदी आलोचना के अंतर्संबंध का ऐतिहासिक तथा वैचारिक अध्ययन प्रस्तुत करता है और यह प्रतिपादित करता है कि भक्ति काव्य हिंदी आलोचना की विकास प्रक्रिया का केंद्रीय आधार है।

कुंजी शब्द

भक्ति काव्य, हिंदी आलोचना, लोकचेतना, निर्गुण भक्ति, सगुण भक्ति, सांस्कृतिक अध्ययन, पुनर्पाठ

आमुख

भारतीय साहित्य के इतिहास में मध्यकाल को 'भक्ति युग' के रूप में अभिहित किया जाता है। यह नामकरण केवल साहित्यिक प्रवृत्ति का संकेत नहीं, बल्कि उस व्यापक सांस्कृतिक परिवर्तन की ओर इंगित करता है जिसने भारतीय समाज की वैचारिक संरचना को पुनर्गठित किया। भक्ति आंदोलन का उदय ऐसे समय में हुआ जब समाज धार्मिक कर्मकांड, जातिगत विभाजन और राजनीतिक अस्थिरता से ग्रस्त था।

भक्ति कवियों ने ईश्वर को मंदिर और शास्त्र की सीमाओं से निकालकर मनुष्य के अनुभव में स्थापित किया। इस प्रक्रिया में धर्म का लोकतंत्रीकरण हुआ और साहित्य पहली बार व्यापक जनसमुदाय की अभिव्यक्ति बना। लोकभाषाओं में काव्य रचना ने हिंदी भाषा के विकास को भी नई दिशा प्रदान की।

हिंदी आलोचना की परंपरा भक्ति काव्य के मूल्यांकन से ही संगठित रूप ग्रहण करती है। आलोचना की विभिन्न पद्धतियाँ—ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, समाजशास्त्रीय और आधुनिक विमर्शात्मक—भक्ति साहित्य की व्याख्या करते हुए विकसित हुईं। अतः भक्ति काव्य और हिंदी आलोचना का संबंध परंपरा और परिवर्तन के निरंतर संवाद का इतिहास है।

विधि

इस शोध आलेख में ऐतिहासिक, तुलनात्मक तथा विश्लेषणात्मक पद्धतियों का समन्वित प्रयोग किया गया है। भक्ति आंदोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन साहित्येतिहास संबंधी स्रोतों के आधार पर किया गया है। हिंदी आलोचना की विभिन्न धाराओं का मूल्यांकन प्रमुख आलोचकों की कृतियों के तुलनात्मक विश्लेषण के माध्यम से किया गया है। साथ ही समाजशास्त्रीय एवं सांस्कृतिक अध्ययन दृष्टि से भक्ति काव्य के पुनर्पाठ की संभावनाओं का परीक्षण किया गया है।

परिणाम

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भक्ति काव्य भारतीय समाज में सांस्कृतिक लोकतंत्र की स्थापना का साहित्यिक माध्यम रहा है। हिंदी आलोचना के विकासक्रम में भक्ति साहित्य की व्याख्या निरंतर परिवर्तित होती रही है। धार्मिक और नैतिक मूल्यांकन से आरंभ होकर आधुनिक आलोचना ने भक्ति काव्य को सामाजिक संघर्ष, सांस्कृतिक संवाद और मानवीय समानता के साहित्य के रूप में स्थापित किया है। इससे यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि भक्ति काव्य स्थिर परंपरा नहीं, बल्कि सतत पुनर्पाठ की अपेक्षा रखने वाली जीवंत साहित्यिक धारा है।

विवेचना

भक्ति आंदोलन भारतीय इतिहास की जटिल सामाजिक परिस्थितियों की प्रतिक्रिया के रूप में विकसित हुआ। मध्यकालीन समाज में धार्मिक संस्थाएँ कर्मकांड और बाह्याचार में उलझ चुकी थीं तथा जातिगत असमानता सामाजिक जीवन को नियंत्रित कर रही थी। भक्ति कवियों ने इन परिस्थितियों के विरुद्ध आध्यात्मिक समानता का विचार प्रस्तुत किया।

निर्गुण संत परंपरा में कबीर, रैदास और दादू जैसे कवियों ने निराकार ईश्वर की अवधारणा के माध्यम से धार्मिक पाखंड और सामाजिक विभाजन का विरोध किया। उनकी वाणी में मानवतावाद, श्रम की प्रतिष्ठा और सामाजिक न्याय की चेतना स्पष्ट रूप से व्यक्त होती है। निर्गुण भक्ति ने धर्म को व्यक्तिगत अनुभव का विषय बनाकर सामाजिक चेतना को नया आयाम प्रदान किया।

सगुण भक्ति परंपरा ने भावात्मक धर्म की स्थापना की। तुलसीदास ने राम के आदर्श के माध्यम से मर्यादा और नैतिकता की सामाजिक कल्पना प्रस्तुत की, जबकि सूरदास ने कृष्ण भक्ति के माध्यम से प्रेम और वात्सल्य की मानवीय अनुभूति को काव्य का केंद्र बनाया। मीराबाई का काव्य स्त्री स्वतंत्रता और आत्मिक स्वाधीनता का अनूठा उदाहरण है, जिसमें सामाजिक बंधनों के विरुद्ध व्यक्तिगत आस्था का स्वर मुखर होता है।

हिंदी आलोचना के प्रारंभिक चरण में भक्ति काव्य का मूल्यांकन धार्मिक और सांस्कृतिक गौरव की दृष्टि से किया गया। भारतेंदु युग में राष्ट्रीय चेतना के निर्माण के संदर्भ में भक्ति साहित्य को भारतीय परंपरा के स्वर्णकाल के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। किंतु आलोचना की वैज्ञानिक परंपरा का विकास आचार्य रामचंद्र शुक्ल के साथ हुआ। उन्होंने साहित्य को समाज से जोड़ते हुए भक्ति काव्य का ऐतिहासिक विश्लेषण किया और लोकमंगल को मूल्यांकन का प्रमुख मानदंड बनाया।

हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भक्ति आंदोलन को भारतीय संस्कृति की समन्वयी प्रक्रिया के रूप में देखा। उन्होंने संत साहित्य को सामाजिक संवाद और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का माध्यम माना। द्विवेदी की आलोचना में इतिहास, संस्कृति और लोकजीवन का गहरा संबंध स्थापित होता है।

रामविलास शर्मा ने भक्ति काव्य का समाजशास्त्रीय पुनर्पाठ प्रस्तुत करते हुए इसे सामंती समाज के भीतर उभरती जनचेतना की अभिव्यक्ति बताया। उनके अनुसार संत साहित्य शोषित वर्ग के अनुभवों का सांस्कृतिक रूप है। इस दृष्टि ने हिंदी आलोचना को वैचारिक गहराई और आधुनिकता प्रदान की।

नामवर सिंह ने आधुनिक आलोचना पद्धतियों के माध्यम से भक्ति काव्य को बहुस्तरीय पाठ के रूप में स्थापित किया। उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि भक्ति साहित्य की प्रासंगिकता उसकी मानवीय और लोकतांत्रिक चेतना में निहित है, जिसे प्रत्येक युग नए संदर्भों में पुनः पढ़ता है।

समकालीन समय में भक्ति काव्य का अध्ययन दलित विमर्श, स्त्री विमर्श और सांस्कृतिक अध्ययन के अंतर्गत किया जा रहा है। कबीर और रैदास की वाणी सामाजिक समानता के विमर्श से जुड़ती है, जबकि मीरा का काव्य स्त्री अस्मिता और प्रतिरोध का प्रतीक बनकर उभरता है। इस प्रकार भक्ति साहित्य आधुनिक बौद्धिक विमर्शों से संवाद स्थापित करता हुआ अपनी नई अर्थवत्ता अर्जित करता है।

वैश्वीकरण और सांस्कृतिक तनाव के वर्तमान युग में भक्ति काव्य सहिष्णुता, संवाद और मानवतावाद की परंपरा को पुनर्स्थापित करता है। यह साहित्य मनुष्य को धार्मिक पहचान से अधिक मानवीय मूल्यों की ओर उन्मुख करता है, जिससे उसकी समकालीन प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है।

निष्कर्ष

भक्ति काव्य और हिंदी आलोचना का संबंध भारतीय साहित्यिक इतिहास की निरंतर विकसित होती प्रक्रिया का परिणाम है। भक्ति साहित्य ने हिंदी भाषा, समाज और संस्कृति को लोकतांत्रिक आधार प्रदान किया, जबकि हिंदी आलोचना ने उसके अर्थक्षेत्र का विस्तार करते हुए उसे नई वैचारिक दिशाएँ दीं। धार्मिक मूल्यांकन से लेकर आधुनिक विमर्शात्मक पुनर्पाठ तक भक्ति काव्य की व्याख्या बदलती रही है। अतः भक्ति काव्य को केवल ऐतिहासिक धरोहर के रूप में नहीं, बल्कि समकालीन सांस्कृतिक चेतना के जीवंत स्रोत के रूप में समझना आवश्यक है।

आभारोक्ति

यह शोध कार्य हिंदी आलोचना की समृद्ध परंपरा तथा विश्वविद्यालयीय शोध वातावरण से प्राप्त प्रेरणा का परिणाम है। पूर्ववर्ती विद्वानों और आलोचकों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की जाती है।

संदर्भ

शुक्ल, रामचंद्र। हिंदी साहित्य का इतिहास। नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 2013।

द्विवेदी, हजारीप्रसाद। कबीर। राजकमल प्रकाशन, 2010।

शर्मा, रामविलास। भक्ति आंदोलन और समाज। राजकमल प्रकाशन, 2001।

सिंह, नामवर। दूसरी परंपरा की खोज। राजकमल प्रकाशन, 2002।

मिश्र, शिवकुमार। भक्ति काव्य : परंपरा और विमर्श। वाणी प्रकाशन, 2016।